अनीता आलोनी
हिन्दी विभाग
वीमेंस कॉलेज
समस्तीपुर

स्नातक हिन्दी प्रतिष्ठा तृतीय खंड
(B.A. Hons. Part III).

अष्टम पत्र

पाठ्य विषय : – हिन्दी आलोचना

'लुच्' धातु से बना है आलोचना | लुच् धातु का अर्थ है देखना | समालोचना इसी का पर्यायवाची शब्द है | सम्यक रूप से देखना या चारों ओर देखना, यह देखना मात्र देखना नहीं बल्कि परखना भी है | इसके लिए एक शब्द और प्रचलित है – समीक्षा | 'सम् + ईक्षा' के योग से बना है समीक्षा | ईक्ष का अर्थ होता है 'आँख' | समीक्षा का भी अर्थ है आंगोपांग रूप से देखना | समीक्षा या आलोचना के लिए कई और शब्द भी चलते हैं – मीमांसा, गवेषणा, मूल्यांकन जड़ताम आदि | आलोचना महज दोष दर्शन ही नहीं है' वह गुण भी दिखलाती है, दोष भी दिखलाती है | मतलब कृति के भीतर वह उन सभी पक्षों को उद्घाटित करने में रुचि रखती है जो सकारात्मक हो एवं नकारात्मक, जिनसे कृति का सम्यक मूल्यांकन हो सके |

आलोचना की कसौटियाँ → इस पर प्रकाश डालने से कई बातें सामने आती हैं

1. आलोचना का मानदंड समकालीन हो या पहले से तय।
2. रचना में किसकी आलोचना की जाए जो रचना में निहित है (स्वायत्तता) अथवा पाठक पर पड़े प्रभाव के आधार पर रचना का मूल्यांकन किया जाए.

विचार स्थिर नहीं होते तो मानक भी स्थिर नहीं होते हैं। अतः बदली हुई स्थितियों के अनुसार मानक भी उपयुक्त और बदला होना चाहिए। आलोचना के समय रचना को ध्यान में रखना चाहिए। रचना और उससे जुड़े प्रभाव को समग्र रूप से देखना ही समालोचना के अंतर्गत आती है।

नामवर सिंह कहते हैं आलोचना वाद - विवाद या संवाद है। आलोचना आलोचक और पाठक के बीच संवाद है। रचनाकार और पाठक के बीच का भी संवाद है आलोचना। इस प्रकार यह त्रिस्तरीय संवाद है। आलोचक रचनाकार और पाठक के बीच की कड़ी है जो दोनों का साक्षात्कार करवाता है। आलोचक रचना में निहित जीवन के साथ सामाजिक जीवन की भी पड़ताल करता है। उसका जुड़ाव समसामयिकता से होता है। कोई भी आलोचना सांस्कृतिक दायित्व का भी वहन करती है। यही कार्य उसे परंपरा से जोड़ता है। व्यक्ति के साथ समसामयिक अनुभव और सम सामयिक अनुभव के साथ सांस्कृतिक दायित्व — आलोचना में तीनों का ही संतुलन होता है। आलोचना के लिए बौद्धिक के साथ प्रतिभा भी चाहिए। इसके अभाव में रचनाकार दूर तक नहीं जा पाएगा।

→

आलोचना में जितना बेलाग जीवन का विश्लेषण होता है उतना ही निर्मम आत्म-विश्लेषण। आलोचना जीवन जगत से अपने सच को जाँचती-परखती और आवश्यक लगे तो संशोधित करते चलती है।

आलोचना का विषय साहित्य तक ही रोक कर नहीं रखा जा सकता, वह समाज और संस्कृति तक जाती है। इसके औजार बौद्धिक के साथ-साथ नैतिक और परंपरा से युक्त भी होते हैं।

आलोचना के भेद — व्यवहारिक और सैद्धान्तिक —

सैद्धान्तिक आलोचना → यह आलोचना की नीति और दिशा निर्धारित करती है। वह उन मानदंडों और नीतियों का निर्माण करती है जिसके आधार पर किसी रचना की परख की जाती है।

व्यावहारिक आलोचना सैद्धान्तिक आलोचना द्वारा निर्मित कसौटियों को आधार बनाकर रचनाकार की किसी खास रचना, उसकी समस्त रचना या युगविशेष की रचनाओं का मूल्यांकन करती है। सैद्धान्तिक आलोचना यदि सिद्धान्त देती है तो व्यावहारिक आलोचना उन सिद्धान्तों का अनुप्रयोग करती है। इनदोनों में ही पारस्परिकता होती है। यदि किसी प्रकरण में सैद्धान्तिक मानदंड स्थिर नहीं किए जा सके हैं तो व्यावहारिक आलोचना के जरिए सैद्धान्तिक आलोचना के औजार ढूँढे जाएँगे। दोनों में क्रिया-प्रतिक्रिया होती रहती है।